MAH/MUL/03051/2012
ISSN-2319 9318

Special Issue Feb. 2018

International Multilingual Research Journal

Vidyawarta®

'आदिवासी साहित्य विमर्श'

डॉ.बापू जी.घोलप
संपादक

डॉ.भरत शेणकर
अतिथि संपादक

IMPACT 5.131 iijif FACTOR

MAH/MUL/ 03051/2012 ISSN :2319 9318

आंतरविद्याशाखीय बहुभाषिक शोध पत्रिका

विद्यावार्ता™

विशेषांक, फरवरी—२०१८

सत्यनिकेतन संचलित

अॅड. मनोहरराव नानासाहेब देशमुख कला, विज्ञान व वाणिज्य महाविद्यालय, राजूर, जि. अहमदनगर

नॅक पुनर्मुल्यांकित 'ए' श्रेणी

हिंदी विभाग एवं

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, नई दिल्ली के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित

राष्ट्रीय संगोष्ठी

आदिवासी साहित्य विमर्श

डॉ. बाबासाहेब देशमुख
प्राचार्य

डॉ. भरत शेणकर
अध्यक्ष, हिंदी विभाग

प्रा. **बबन थोरात**
हिंदी विभाग

Reg.No.U74120 MH2013 PTC 251205
Harshwardhan Publication Pvt.Ltd.
At.Post.Limbaganesh,Tq.Dist.Beed
Pin-431126 (Maharashtra) Cell:07588057695,09850203295
harshwardhanpubli@gmail.com, vidyawarta@gmail.com
All Types Educational & Reference Book Publisher & Distributors / www.vidyawarta.com

38) वीरेन्द जैन के 'पार' उपन्यास में आदिवासी विमर्श || 127
प्रा. मिनेश रामनाथ सातपुते, संगमनेर

39) आदिवासी विमर्श–एक मूल्यांकन || 130
डॉ. मोहन लक्ष्मणराव चव्हाण, नाशिक.

40) 'मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ' में अभिव्यक्त आदिवासी जीवन का यथार्थ || 133
निशान्त मिश्रा, महाराष्ट्र

41) निर्मला पुतुल का काव्य : आदिवासी स्त्री || 139
डॉ प्रवीण मन्मथ केन्द्रे, संगमनेर

42) 'सहराना' उपन्यास में आदिवासी विमर्श || 142
प्रा. आर एन वाकळे, येवला (नाशिक)

43) हिंदी कविता में चित्रित आदिवासी विमर्श || 145
राकेश वळवी, नाशिक–५,

44) आदिवासी जीवन के परिप्रेक्ष्य में 'अपराध' कहानी || 149
श्री. शरद कचेश्वर शिरोळे, पुणे

45) 'धार' उपन्यास में चित्रित आदिवासी जीवन || 152
डॉ. सुनील दशरथ चव्हाण, संगमनेर

46) निर्मला पुतुल के काव्य में संथाल जीवन का अंकन || 154
प्रा.डॉ. श्वेता चौधारे, सोनई।

47) 'समय के बदलाव को रेखांकित करती आदिवासी कहानी– 'हंसिया' || 157
प्रा.डॉ.योगेश विट्ठल दाणे, कोपरगांव

48) आदिवासी साहित्य में रोज केरकेट्टा का स्थान || 161
प्रा.तपासे संदिप दामु, तळेगांव दिघे.

49) संजीव कृत 'धार' उपन्यास में आदिवासी विमर्श || 164
कु. छाया रत्नाकर पांढरकर, पुणे

50) हिन्दी आदिवासी साहित्य ओर लोक परम्परा विमर्श || 166
DR- CHILUKA PUSPHALA, BANGALORE 560052

www.vidyawarta.com/02 http://www.printingarea.blogspot.com

46

निर्मला पुतुल के काव्य में संथाल जीवन का अंकन

प्रा.डॉ. श्वेता चौधारे
हिंदी विभागाध्यक्ष
कला, वाणिज्य व विज्ञान महाविद्यालय, सोनई।

सारांश

वर्तमान साहित्य अध्येता के लिए आदिवासी विमर्श यह विषय नया नहीं है। १९९१ के बदलते वैश्विक परिप्रेक्ष्य और स्वीकृत आर्थिक उदारीकरण की नीतियों से भारत ने विश्व पटल पर अपने कदम रखें; वहीं इन नीतियों को सबल और तेज करने की मंशा में आदिवासियों के शोषण में बढ़ोत्तरी होने लगी। इस शोषण की प्रतिक्रिया स्वरूप आदिवासी अस्मिता और उसकी रक्षा हेतू राष्ट्रीय –अंर्तराष्ट्रीय मंच से प्रतिरोधस्वरूप जो रचनात्मक ऊर्जा प्रस्फूटित हुई, वह आदिवासी विमर्श है। इसमें प्राण फूंकने का काम आदिवासी–गैरआदिवासी साहित्यकारों ने किया, जिनमें निर्मला पुतुल का नाम विशेष है। स्वयं संथाल आदिवासी होने के कारण इन्होंने अपने समाज की विवंचनाओं का सूक्ष्म अवलोकन ही नहीं, बल्कि उसे जिया भी है। आदिवासी जीवन के अनछूए पहलू तथा स्वयं भोगे हुए सत्य को बेबाकी से उनकी रचनाएंउभारतीहै।

शोध आलेख

२० वी सदी के अंत में भारत में कई सामाजिक आंदोलन हुए।इन आंदोलनों ने समाज मन में अपना स्थान बनाते हुए सामाजिक एकता को प्रस्थापित किया। जनसामान्य, लघु मानव की मुक्ति के लिए चलाए गए यह आंदोलन समय के साथ ओर बलावान होते गए।आदिवासियों की वास्तविक समस्याएं, जीवन संघर्ष को साहित्य की दुनिया में आदिवासी विमर्श ने ठेठ जनभाषा में अभिव्यक्त किया।और सत्ता–प्रतिष्ठान से दूर, समाज से उपेक्षित आदिवासियों को पहचान दिलाई। विकास के नाम पर पैतृक क्षेत्रों से बेदखल यह आदिवासी विस्थापितों की जिंदगी जीने लगे। शेष आदिवासी क्षेत्र में अधिकारों के लिए लडाई का स्वांग रचाते उग्रवामपंथियों, नक्सलवादियों और उनके प्रतिरोध में हिंसा करती सरकार के बीच आदिवासी समुदाय पीस गया। नक्सलवाद से मोहभंग, आत्मसमर्पन, पुलिस से संघर्ष और समाज की मुख्यधारा से कटाव के साथ आदिवासी भाषा–संस्कृति पर वैश्विकरण ने संकट की नंगी तलवार खडी कर दी। ऐसे में साहित्य क्षेत्र में आदिवासी विमर्श आदिवासी जन–जातियों के इतिहास, संस्कृति का सच्चा चेहरा सामने रखने का प्रयास करता है।

संथाली मान्यता के अनुसारपिलचू दंपति उनके पूर्वजहै।किंतु पिलचू हडाम और पिलचू बूढी के बीच का अनन्य प्रेम आज आदिवासियों में नहीं। स्त्री संभवत: देहभोग तक सीमित हो गई। इसलिए आज की स्थिति देख निर्मला पुतुल को विश्वास नहीं होता की ये 'मगजहीन लोग' प्रेम में विश्वास रखने वाले पिलचू दंपति के वंशज है–

''जो एक छोड दूसरी
दूसरी छोड
तीसरी तक को उठा लाते है
और बिठा देते है घर
जरुरत बस मन भर जाने की होती है' १

आदिवासी विमर्श की जडे इतिहास में छूपी है। उपनिवेशवाद की आंधी ने लगभग १७ वी सदी से ही भारत में विद्रोह के बीज बो दिए। भारत में पैर फैलाते अंग्रेजों ने यहां के संसाधनों पर वर्चस्व करने १७९३ में स्थाई भूमि कर व्यवस्था को लागू किया। जिसके अनुसार संथालों की पैतृक भूमि जमींदारों के कब्जे में दी गई। जिस जमीन के संथाल स्वामी थे, उसी के लिए वे गुलाम बन गये। १८५५ में जमींदार, महाजन और अंग्रेज कर्मचारियों के अन्याय के विरुद्ध संथाल जनता के विद्रोह को, प्रथम सशस्त्र जनसंग्राम को जिन भाई–बहनों का

नेतृत्व मिला, उनमें सिद्धू और कान्हू भी थे, जिन्हें संथाल विद्रोह के प्रणेता भाई भी कहा जाता है। किंतु आज पहले ही अपनी नींव से कटते आदिवासियों के गौरवमय इतिहास का विद्रूपीकरण हो रहा है। सिद्धू–कान्हू को वीरता को अनदेखा करनेवाले उनके लक्ष्य, उद्देश्य से अनभिज्ञ हो उन्हें बेईमान,लुच्चा–लपट कह, उनके संग्राम को जनजातीय संग्राम के रूप में सीमित करते है। आदिवासियों की सच्ची विरासत उनकी वीरता में है। मात्र लोगों ने उनकी लंगोटी को देख उनकी वीरता, पूर्वजों का मजाक उडाया। सिद्धू–कान्हों की वीरता को भूलाने के प्रयासों में उनकी कुर्बानी को आवारा, बदमाश जैसे लेबल लगाये। आदिवासियों के श्रम पर शासन कर रही वर्तमान व्यवस्था ने उन्हें 'आदमी' कहलाने का हक भी नहीं दिया। आदिवासियों की वीरता सेडरती इस व्यवस्था ने उनके सामने प्रेरक इतिहास, इतिहास पुरुष रखना भी ठीक न समझा।

इतिहास ने संथालों के संग्राम को छोटा बनाने का प्रयास किया। शोषण के विरुद्ध आंदोलनों की आवाजों को महज महाजनों–जमीदारों के विरुद्ध लडाई करार दिया गया। स्वार्थों के चक्कर में फंस आदिवासियों ने आपसी एकजूटता को छोड दिया। दूसरी ओर आदिवासी वीरपुरुषों का नाम लेकर भोले–भाले आदिवासियों को भ्रमित कर, तो कहीं इन्हें आपस में लडवाकर कुछ लोग सत्ता पा रहे है। हमने जिस आजादी को पाया है, उसके मोह में हम,आदिवासी भीआजादी के मसिहाओं को भूल गये। कैसी विडंबना है अंग्रेजों के जाने के बाद भी अंग्रेजों की मानसिकता के प्रतिक भारत में शेश है।

अंग्रेजों के अप्रत्यक्ष उत्तराधिकारी अभी भी
अपनी मानसिकता के साथसक्रीय है
सिद्धों–कान्हू
काश! तुम होते तो देखते
तुम्हारे नारे से हमारे ही विरुद्ध
और तुम्हारे विरुद्ध लड रहे है वे २

आजादी के बाद भी आधुनिकता की पहुंच से, बुनियादी सहूलतों से दूर किंतु अपनी सादगी, भोलेपन में जीते आदिवासियों के गांव, कस्बे पहाड की तलहटी तक सीमित होकर भी प्रकृति से रिश्ता बनाए हुए है।मात्रसीमित पशुधन के साथ घास–फूस की झोपडियों मेंइनके भूख से बिलबिलाते बच्चे, कोसों दूर से झरने का पानी लाती बेटियां,पत्थर फोड,सडक बनाकर या लकडियों को बाजार बेच आय के स्त्रोत प्राप्त करते आदिवासी यह अहसास दिलाते है कि सबकुछ ठीक नहीं है।आदिवासियों की दूनिया अपने–आप में ऐसी सीमित हो गई है, जहां आते–आते सरकारी व्यवस्था भी दम तोड दे।

वे नहीं जानते कि
कैसे पहुंच जाती है, उनकी चीजें दिल्ली
जबकि राजमार्ग तक पहुंचने से पहले ही
दम तोड देती उनकी दुनिया की पगदंडिया .....
नहीं जानती कि कैसे सूख जाती है
उनकी दुनिया तक आते–आते नदियां
तस्वीरें कैसे पहुंच जाती है उनकी महानगर ३

समाज कीरुग्ण मानसिकता आदिवासियों की उन्नति को पचा नहीं सकती। स्वयंसिद्ध हो व्यवस्था में ऊपर आने की कोशिश करनेवालों के लिए शोषण के जाल बिछे है। पूंजीवाद से संघर्ष करते आदिवासी, विशेषत: स्त्रियों के लिए स्थिति अत्यांधिक विदारक है। जिस देहबोली के कारण आदिवासी तिरस्कृत है, उसी को स्वयं पर लागू करने की कामना शायद ही सभ्य कहलानेवाला समाज करें। अत: चिपटी नाक, पांवों की बिबाईयां, नंग–धडंग शरीर और इनका मजाक उडाते–ठहाके लगाते लोग,क्या यह स्थिति हम सहन कर पाते ? वहीं जंगली, असभ्य,पिछडे कहकर जिन्हें हिकारत भरी नजरों से देखा गया, उनकी स्त्रियां समाज के लिए मात्र मादा बन कर रह गई। इसलिए निर्मला जी पूछती है –

बताओं न कैसा लगता है
जब पीठ थपथपाते हाथ
अचानक मांपने लगते मांसलता की मात्रा
फोटो खींचते, कैमरे के फोकस
होंठो की पपडियों से बेखबर
केंद्रित होते छाती के उभारों पर ४

बाजारवाद ने आदिवासियों की मेहनत का ... उनको पहचान से दूर किया। इसलिए हजारा ... पत्तलें बनाने वाले उनके हाथों को पेट भर खाना नहीं मिलता। जिस दुनिया के लिए आदिवासी चटाईया, परवे, झाडू न जाने कितनी चीजे बनाते है, उन्ही चीजो का प्रयोग इनके लिए अलभ्य है। पूंजीवादी और आदिवासियों की दुनिया एक दूसरे से दूर है। फिर भी आदिवासियों की चीजे न जाने कैसे शहर के बाजार मे बिकने पहुचती है, जबकि —

जिन घरो के लिए बनाती हो झाडू,
उन्ही से आते है कचरे तुम्हारी बस्तियो मे ५

बढते औद्योगिकरण मे आदिवासियों का अस्तित्व खतरे मे आ रहा है। उनकी बस्तिया नगर निर्माण के चक्कर मे नष्ट हो रही है, पेड कुल्हाडियों से धराशाही हो रहे है। सरकारी नीतियों के छलावे से वे भ्रमित हो रहे है। ऐसे मे निर्मला जी इस संकट के लिए आदिवासियों को सचेत करते हुए कहती है —

उठो कि अपने अंधेरे के खिलाफ उठो
उठो अपने पीछे चल रही साजिश के खिलाफ
उठो कि तुम जहा हो वहा से उठो
जैसे तूफान से बवंडर उठता है
उठती है जैसे राख मे दबी चिनगारी ६

आजादी के बाद भी आदिवासियों के हिस्से मे भूख और कष्ट ही रहे। आधुनिकता के जंजाल मे दूर आदिवासियो की जिंदगी मे बाहरी सभ्यता धीरे–धीरे प्रवेश कर गई। निर्मला जी के अनुसार बाहरी दुनिया के यह तत्व सौदागर है, जो अपने स्वार्थ के लिए इनके अधिकार पर घात करते है, पूंजीवाद की दुनिया मे इन्हे घसीटकर इनकी लडकियों को कलकत्ता, नेपाल के बाजारो में बेचते है। वैश्विकरण, बाजारवाद मे आदिवासियों के अस्तित्व का संकट गहरा हो रहा इन पंक्तियों मे देखा जा सकता है, जो उनकी सभ्यता–संस्कृति को भूला अनजाने मे ही उन्हे उपभोक्ता मात्र बनाने का प्रयास करती है। —

वे दबे पांव आते है, तुम्हारी संस्कृति मे

निर्मला जी की 'राजानी किस्म' कविता आदिवासियों की भ्रष्ट होरही परंपराओं की ओर इंगितकरती है, जहा मातृसत्तात्मक पद्धती मे पल्ल्वित होते आदिवासी पुरुष महज जमीदार, ठेकेदार के चंद और एक बोतल शराब मे डूब अपनी स्त्रियों का अपमान–शोषण कर, उनकी आवाज दबाने की कोशिश करते है। अंधश्रद्धा, लिंग आधारित असमानता, जातीयता, संपत्ति अधिकार जैसे कई मुद्दों पर लडती आदिवासी नारीया 'प्यारी हेम्ब्रम', 'सुबोधिनी मारंडी', 'पकलू मारंडी' जैसे पात्र न बने, इससे निर्मला जी डरती है।

निर्मला पुर्तुल का साहित्य आदिवासी अस्मिता को जगाने वाला है। दुनिया का सबसे बडा लोकतंत्र होने का अहं करता भारतीय गणतंत्र अपनी ही व्यवस्था में पतित हो रहे आदिवासियों की हृदयद्रावक स्थिति पर मौन है। आदिवासी अस्तित्व की परिकल्पना हमारे सामने जिन प्राकृतिक संसाधनों के स्वामी के रूप में कराई जाती है, उस वास्तव की कलाई खोलने का काम निर्मला जी का साहित्य करता है, आक्रोश भरे विद्रोह स्वर को प्रतिमायित करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची —

१. प्राथमिक आदिवासी विमर्श — संपादक अश्विनी कुमार पंकज
२. निर्मला पुतुल की कविताएं : आदिवासी पीडा और प्रतिरोध का काव्य संसार — रेखा सेठी
३. नगाडे की तरह बजते शब्द — डॉ. सुनील जाधव
४. पिलून बूढी से — निर्मला पुतुल
५. आखिर कहे तो किससे कहे-- निर्मला पुतुल
६. आदिवासी स्त्रियां— निर्मला पुतुल
७. अगर तुम मेरी जगह होते — निर्मला पुतुल
८. आदिवासी स्त्रियां— निर्मला पुतुल